IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भारत का पाश्चात्य विश्व के साथ व्यापारिक सम्बन्ध (पूर्व मध्यकाल विशेष सन्दर्भ)

डॉ0 विभूति नारायण सिंह

व्यापार तथा वाणिज्य भारत के आर्थिक जीवन का न केवल प्रमुख तत्व रहा है वरन् यहाँ के निवासियों की समृद्धि का प्रधान कारण भी रहा है। अत्यन्त प्राचीन काल से ही यहाँ के निवासियों ने व्यापार एवं वाणिज्य में गहरी दिलचस्पी दिखाई। समृद्ध व्यापार में प्रयासों के साथ–साथ राज्य की ओर से भी व्यापारियों को पर्याप्त प्रोत्साहन दिया जाता था, परिणाम–स्वरूप आन्तरिक व्यापार के साथ–साथ वाह्य व्यापार भी सतत् रूप से फला–फूला। जहाँ विश्व के तमाम देशों के साथ भारत का सम्बन्ध सांस्कृतिक एवं राजनीतिक था, वहीं पश्चिमी देशों के साथ यह मुख्यतः व्यापार परक ही था।

भारत का पश्चिमी देशों के साथ सम्बन्धों की ऐतिहासिकता प्रागैतिहासिक युग तक देखने को मिलती है। सिन्धु सभ्यता का मेसोपोटामिया तथा सुमेरियन सभ्यता के निवासियों के साथ एक सुदृढ़ व्यापारिक सम्बन्धों का साक्ष्य देखने को मिलता है। वैदिक युग में भी पाश्चात्य जगत के साथ व्यापारिक सम्बन्ध चलता रहा। फारस की खाड़ी तक भारतीय व्यापारी वस्तुओं का क्रय–विक्रय करते थे। पश्चिमी तट के सोपारा तथा भृगुकच्छ के प्रसिद्ध बन्दरगाह बौद्धकाल में पश्चिमी देशों के साथ घनिष्ठ व्यापारिक सम्बन्ध उपलब्ध कराते थे। बावेरू जातक से पता चलता है कि भारतीय व्यापारी बेबीलोन में कौवे तथा मोर की बिक्री करते थे। जातक ग्रन्थों में कई स्थानों पर व्यापारियों द्वारा समुद्री यात्रा करने तथा कभी–कभी जहाजों के दुर्घटना ग्रस्त होने का उल्लेख मिलता है। 'समराइच्चकहा' नामक ग्रन्थ से कटाहद्वीप[1] की कठिन समुद्री यात्रा का वर्णन मिलता है।[2] मौर्यकाल की सुदृढ़ राजनीतिक परिस्थितियों ने व्यापार–वाणिज्य की प्रगति में महान योगदान दिया। इस समय भारत का व्यापार सीरिया, मिस्र तथ अन्य पश्चिमी देशों के साथ स्थापित हुआ। मौर्य साम्राज्य के पतन के पश्चात् दकन में

सातवाहनों तथा उत्तर–पश्चिम में कुषाणों का मजबूत शासन स्थापित हुआ। इस काल में भारत का मध्य–एशिया तथा पश्चिमी देशों विशेषकर रोम के साथ व्यापारिक सम्बन्ध काफी बढ़ गया।

गुप्तकाल में भी भारत का पश्चिमी देशों के साथ व्यापार अबाध गति से चलता रहा परन्तु इस काल में रोम का महान साम्राज्य छिन्न–भिन्न हो गया।

विवेच्यकाल पूर्वमध्यकाल में भारत तथा पश्चिमी देशों के साथ व्यापार में बदलाव के तत्व दृष्टिगोचर होते है। राजपूत काल में सामन्तों के छोटे–छोटे राज्य स्थापित हुए जो अपनी शक्ति और प्रभाव बढ़ाने के लिए परस्पर संघर्ष में उलझ गये। सामन्तों ने व्यापार–वाणिज्य को हतोत्साहित किया तथा आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहन दिया, निरन्तर युद्धों के कारण भी व्यापारिक प्रगति में बाधा पहुंची।

विद्वानों ने आर्थिक गतिविधियों की दृष्टि से पूर्व–मध्यकाल को दो भागों में विभाजित किया है। प्रथम भाग (650–1000ई0) में व्यापार वाणिज्य में ह्रास हुआ। इस समय तक रोमन साम्राज्य का पतन हो चुका था फलस्वरूप पश्चिमी देशों के साथ व्यापार अवरूद्ध हुआ। इस्लाम के उदय के कारण भी भारत के स्थल मार्ग से होने वाला व्यापार प्रभावित हुआ इसी कारण इस काल में स्वर्ण मुद्राओं का प्रचलन बन्द हो गया तथा चाँदी एवं ताँबे की मुहरें भी बहुत कम ढलवायी गयी। नगरों के पतन के कारण व्यापारी गाँवो की ओर उन्मुख हुए।

इस काल में कुछ भारतीय जन व्यापारिक उद्देश्यों से प्रेरित होकर ईरान जाकर बस गये थे और वहाँ उन्होंने अपने धार्मिक कार्यों में भी पूरी स्वतंत्रता प्राप्त की। अरब लेखकों के वर्णनों से पता चलता है आठवीं–नवी शताब्दी में सिंध के लोग ईराक में जाकर बस गये थे और वहाँ के सर्राफों तथा व्यापारियों के खजांची का काम करने लगे थे। इन भारतीयों पर ईराक वालों का काफी विश्वास रहता था। बसरा का निवासी जाहिज नामक अरब लेखक नवीं शती में लिखता है कि ''जितने ईराक में सर्राफ है सबके यहाँ खजांची खास सिंधी होगा या किसी सिंधी का लड़का होगा, क्योंकि उनमें हिसाब–किताब रखने और सराफे के काम का स्वाभाविक गुण होता है और ये लोग ईमानदार और स्वामी निष्ठ सेवक भी होते हैं।''[3]

अरब यात्रियों के विवरणों से तत्कालीन व्यापारिक मार्गों का भी विवरण प्राप्त होता है। मध्य काल में पश्चिमी देशों से भारत का व्यापार प्रायः समुद्री मार्ग से होता था परन्तु कभी–कभी स्थल मार्ग के प्रयोग का भी उल्लेख मिलता है। समुद्री मार्गों का वर्णन सुलैमान

सौदागर, अबु जैद सराफी, इब्न खुर्दाजबा आदि ने किया है। नवीं शताब्दी का यात्री सुलेमान पूर्व में जाने के लिए जहाजों का रास्ता इस प्रकार बताता है–''बसरा और ओमान से पहले सब माल सैराफ पहुंचता है वहाँ माल जहाजों पर लादा जाता है, यहीं से पीने का मीठा पानी भी ले लिया जाता है। सराफ से जहाज मस्कत बन्दरगाह पहुंचते हैं, वहाँ से ये भारत के लिए चल पड़ते हैं और एक महीने में भारत के कोलममली बन्दरगाह पहुँचते है। चीन जाने वाले जहाज वहाँ से चीन रवाना हो जाते है। कोलममली में जहाज बनाने और उनकी मरम्मत करने का कारखाना है।''[4] अरब यात्रियों के लेखों से पता चलता है कि सिन्ध, कच्छ, गुजरात के तट पर अनेक सुरक्षित बन्दरगाह थे। जाट और गुर्जर लोग इस काल में कुशल नाविक थे। दोनों में सामुद्रिक प्रतियोगिता चलती थी।''[5]

पूर्व मध्यकाल के दूसरे भाग (1000–1300 ई0 लगभग) अर्थात् उत्तरार्द्ध में व्यापार वाणिज्य की स्थिति में काफी सुधार हुआ। इस समय कुछ बड़े राजवंशों यथा–चौहान, परमार, चन्देल आदि की स्थापना हुई तथा विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया पर थोड़ा अंकुश लगा। इन राजवंशों ने व्यापार–वाणिज्य को पर्याप्त प्रोत्साहन तथा संरक्षण दिया। सिक्कों का पुनः प्रचलन किया। मुस्लिम सत्ता स्थापित हो जाने से मुसलमान व्यापारियों तथा सौदागारों की गतिविधियों में तेजी आयी फलस्वरूप उत्तरी भारत में व्यापार–वाणिज्य में प्रगति हुई। ग्यारहवीं शताब्दी तक आते–आते भारत का पश्चिमी देशों के साथ व्यापार पुनः तीव्र हो गया फलस्वरूप देश आर्थिक दृष्टि से समृद्ध हुआ। यही कारण है कि इस काल के सिक्के तथा मुहरें बड़ी संख्या में प्राप्त होते हैं।

उत्तर भारत के समान दक्षिण भारत के चालुक्य, चोल, पाण्ड्य, पल्लव शासकों के काल में भी पाश्चात्य जगत के साथ भारत का व्यापार उन्नत अवस्था में रहा। चोलों के समय फारस के साथ घनिष्ठ व्यापारिक संबंध था। फारस की खाड़ी के पूर्वी तट का प्रसिद्ध बंदरगाह सिरफ था। आबूजैद के विवरण से पता चलता है कि भारत के व्यापारी बड़ी संख्या में वहाँ जाते थे तथा मुसलमान व्यापारियों के साथ साथ सम्पर्क स्थापित करते थे। दक्षिण भारत में इस समय कई प्रसिद्ध बंदरगाह थे जिनसे होकर पश्चिमी देशों को जाया जाता था। इनमें खम्भात, भड़ौच, सोमनाथ, कोलम आदि का नाम उल्लेखनीय है। कोलम सुदूर दक्षिण में पश्चिमी तट पर था, यह समुद्रपार के पश्चिमी देशों के बीच व्यापारिक गतिविधियों का प्रमुख केन्द्र था। पश्चिमी

देशों से आने वाले जहाज यहाँ रूकते थे, अरब जाने वाले जहाजों का भी यह विश्राम स्थल था।

भारत से पश्चिमी देशों को जाने के लिए तीन प्रमुख व्यापारिक मार्ग थे। पहला मार्ग सिन्धु नदी के मुहाने से समुद्रतट होते हुए फारस की खाड़ी में स्थित दजला–फरात तक जाता था। दूसरा स्थल मार्ग जो हिन्दुकुश दर्रे से होकर बल्ख और ईरान होते हुए अन्तियोक तक पहुंचता था तथा तीसरा जल मार्ग फारस तथा अरब के तटवर्ती प्रदेशों से होते हुए लाल सागर को पारकर यूनान तथा सिम्र की ओर जाता था। व्यपारियों ने अधिकांशतः जलमार्गों का ही उपयोग किया।

इस प्रकार भारत तथा पाश्चात्य विश्व के बीच व्यापारिक सम्बन्ध जिसकी शुरूआत प्रागैतिहासिक काल से होती है, पूर्वमध्य काल मे भी थोड़े बहुत उतार–चढ़ाव के साथ अबाध रूप से चलता रहा। यह व्यापार अधिकांशतः भारत की समृद्धि का एक महत्वपूर्ण साधन बना।

संदर्भ–

1. संस्कृत साहित्य में इस द्वीप का 'कटाह और कड़ाह नाम से बहुत उल्लेख मिलता है। राजराज चोल तथा राजेन्द्र चोल के लेखों में इसका नाम 'कड़ारम' दिया है। यह स्थान मलाया प्रायद्वीप के उत्तर–पश्चिम में है इसका वर्तमान नाम 'केड़ा' है।
2. समरइच्च्कहा, पृं0 195–206, वासुदेव शरण अग्रवाल कटाहद्वीप की समुद्र यात्रा, हिन्दुस्तान बम्बई (दिपावली विशेषांक, अक्टूबर, 1944)
3. दे0 सुलैमान नदवी, अरब और भारत के सम्बन्ध (अनु0 राजचन्द्र वर्मा, प्रयाग 1930), पृ0 104
4. सुलैमान सौदागर का यात्रा–विवरण (नदवी द्वारा उद्धृत, पृ0 47)।
5. मुकर्जी इंडियन शिपिंग पृ0 169–70